International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232
Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 4; Issue 5; September 2018; Page No. 16-19

कालजयी रचनाकार गजानन माधव मुक्तिबोध की कालजयी कविता 'अंधेरें में' की विशिष्टता

डॉ० दिलीप कुमार झा
पीएच०डी०, बी०एड०, नेट, बेट, सलेट परीक्षा उत्तीर्ण स्नानकोत्तर हिन्दी शिक्षक फोर्टगलास्टर गवर्नमेंटस्पोन्सर्ड उच्चतर माध्यमिक विद्यालय राधानगर, हावडा, प० बंगाल, भारत।

सारांश
गजानन माधव 'मुक्तिबोध' हिन्दी के कालजयी रचनाकार है। उनकी कविता 'अंधेरे में' में एक अमर कविता है। मुक्तिबोध की प्रसिध्द लंबी कविता 'अंधेरे में' से गुजरना एक काव्ययात्रा है। तरह – तरह के अनुभवों के बीच वह कवि की न खत्म होने वाली रचनात्मकता की तलाश है जिसे उसने 'परम अभिव्यक्ति' नाम दिया है। यह रचनात्मकता बहुमुखी संघर्षो में बनती है और एक बेहतर सामाजिक जीवनक्रम की आकांक्षा से अभिप्रेरित है। 'अंधेरे में' का ध्वंस एलियट के 'बैस्ट लैण्ड' के माहौल की कभी–कभी याद दिलाता है। मुक्तिबोध सस्ते समन्वय या कि औपचारिक आशावाद से ठगे जाने वाले नही, इसलिए कविता में तलाश अंत तक जारी है। शांति पाठ से उन्हें शांति न मिलती, शायद वही शांत वे चाहते नही। समस्या पश्चिम की अलग है हमारी अलग। ध्वंस वहाँ युध्द का था, यहाँ देशी–विदेशी शोषण का। 'अंधेरे में' का पहला प्रकाशन 'कल्पना' पत्रिका में 1964 में हुआ 'आशंका के द्वीप अंधेरे में' नाम से।

मूल शब्द : भारतीय सुसंस्कृत, स्त्री संवेदना।

प्रस्तावना
इसलिए मैं हर गली में
और हर सड़क पर
झाँक झाँक कर देखता हुँ हर एक चेहरा
प्रत्येक गतिविधि,
प्रत्येक चरित्र,
व हर एक आत्मा का इतिहास,
हर एक देश व राजनैतिक परिस्थिति
प्रत्येक मानवीय स्वानुभूत आदर्श
विवके–प्रक्रिया, क्रियागत परिणत !!
खोजता हुँ पठार– पहाड़ समुदंर
जहाँ मिल सके मुझे
मेरी वह खोई हुई
परम अभिव्यक्ति अनिवार
आत्मसंभवा!

'अंधेरे में' कविता की मे अंतिम पंक्तियाँ उस अस्मिता या आइडेंटिटी की खोज की ओर संकेत करती है जो आधुनिक मानव की दृसबसे ज्वलंत समस्या है। निस्संदेह इस कविता का मूल कथ्य है अस्मिता की खोज, किन्तु कुछ अन्य व्यक्तिवादी कवियों की तरह इस खोज में किसी प्रकार की आध्यात्मिकता या रहस्यवाद नही, बल्कि गली–सड़क की गतिविधि, राजनीतिक परिस्थिति और अनेक मानव–चरित्रों की आत्मा के इतिहास का वास्तविक परिवेश है। आज के व्यापक सामाजिक संबंधों के सेदर्भ में जीनेवाले व्यक्ति के माध्यम से ही मुक्तिबोध ने 'अंधेरे में' अस्मिता की खोज को नाटकीय रूप दिया है।" [2]

अंधेरे में' एक स्वप्न कथा
कथन शैली की दृष्टि से 'अंधेरे में' एक स्वप्न कथा है। हिन्दी में कविता के अंतर्गत फैंटेसी के उपयोग के लिए मुक्तिबोध विख्यात है, किन्तु इस उपयोग की कलात्मक सार्थकता पर बहुत कम विचार किया गया है।

'फैंटेसी' शब्द की उत्पति ग्रीक शब्द 'फैण्टशिया' से हुई है जिसका अर्थ है– अवास्तव या अमूर्त को दृश्य बनाना है अर्थात् काल्पनिक या स्वप्न दृश्यों को विम्बात्मक स्वरूप देने का सामर्थ्य। सफल फैंटेसी उसी को माना जाता है जिसमें यथार्थ और फैंटेसी संबंधी विचार इतने घूलमिल जाते है' कि उन्हें अलगाया नही जा सकता। फैंटेसी में रचनाकार को कल्पना के माध्यम से रचना–संसार में विचरण करने की पूरी छूट होती है। नाटक में एक भोंडा परिहास होता है 'फार्स' जिसमें सामान्य संभावनाओं को छोड़कर सुदूर तक पहुँचने वाली संभावनाएँ हुआ करती है। फैंटेसी इसी 'फार्स' से मिलती जुलती होती है। फैंण्टेसी में यथार्थ इस तरह प्रस्तुत किया जाता है कि वह रहस्य से घिरा होता है। वह हमारी अतृप्त इच्छाओं को तृप्ति का साधन है, वह समस्त विधि–विधानों से मुक्त मनुष्य की कल्पना तरंग है जो देश कालातीत होती है। मुक्तिबोध के अनुसार, फैंटेसी एक झीना पर्दा है जिसमें जीवन तथ्य झाँक–झाँक उठते है। फैंटेसी का ताना–बाना कल्पना विम्बों में प्रकट होने वाली विविध क्रिया–प्रतिक्रियाओं से बना हुआ होता हैं।" [3]
साहित्य में प्रयुक्त होने वाली फैंटेसी में चेतन–अवचेतन दोनों सक्रिय रहतें है। कवि की कल्पना भी चेतन–अवचेतन मन में उटती है। मुक्तिबोध की लम्बी कविताओं में उपमा, रूपक, अलंकार, विम्ब, प्रतीक एक साथ मिलकर फैंटेसी का रूप लेकर प्रयुक्त हुए है जिसमें पठार, पहाड़, गुफा, समुंदर, अंणेरा अनेक प्रकार के तनावों की अभिव्यक्ति, असाधरण भाषा, प्रतीक–विम्ब प्रयोग इस फैंटेसी को ट्रेजिडि रूप में चित्रित कर सके है। ट्रेजिडि अक्सर फैंटेसी में ही होती है। 'अंधेरे में' की फैंटेसी नाट्यशैली में अभिव्यक्ति है। कवि स्वप्न के माध्यम से फैंटेसी रचकर यथार्थ का चित्रण करता है। मुक्तिबोध के अनुसार, "कभी – कभी फैंटेसी जीवन की वास्तविकताओं को लेकर उपस्थित होती है और कथा के अंतर्गत जो पात्र – चित्रण और कार्य प्रस्तुत होते हैं' वे सभी प्रतीक होते हैं – वास्तविक जीवन तथ्यों के।" [4]
स्वंय मुक्तिबोध 'फैंटेसी' शब्द का प्रयोग काफी व्यापक अर्थ में करते थे। उनके लिए 'कामायनी' भी एक तरह की 'फैंटेसी' थी। इस

प्रकार स्वप्न कथा 'फैंटेसी' का एक प्रकार मात्र है। मुक्तिबोध की दृष्टि में कविता के अंतर्गत 'फैंटेसी' के प्रयोग की सबसे बड़ी सुविधा यह है कि लेखक वास्तविकता के प्रदीर्घ चित्रण से बच जाता है। कहना न होगा कि स्वप्न शैली में कथा कहने के कारण 'अंधेरे में' कविता में काफी मितव्ययिता और सघनता आ गई है तथा वर्णन के अनावश्यक विस्तार से अपने– आप निजात मिल गई। स्वप्न शैली के कारण एक ओर कथा अनिवार्यता चित्रात्मक हो गई तो दूसरी ओर एक से अधिक कथाओं के क्रमबध्द संयोजन में भी लाघन आ गया, क्योंकि स्वप्न–क्रम प्रकृत्या अतार्किक और विषया धर्मी होता है। स्वप्न–शैली के साथ एक सुविधा यह भी है कि आवश्यकतानुसार देश और काल की दृष्टि से नितांत असंबध्द तथा दूर की वस्तुओं को भी एकत्र रखा जा सकता है। 'अंधेरे में' के अंतर्गत ताल्सताँय, तिलक और गाँधी इसी जादू की छड़ी से बुला लिए गए है। इसी प्रकार सामान्यतः असंभव प्रतीत होनेवाली घटना भी स्वप्न संभव दिखाई जा सकती है और उसके औचित्य के बारे में कोई संदेह भी नही कर सकता। उदाहरण के लिए 'अंधेरे में' के अंदर गाँधी जी काव्यनायक के कंधे पर एक शिशु रखकर अचानक गायब हो जाते है और वही शिशु थोड़ी देर के बाद सूरजमुखी फूल के गुच्छे में बदल जाता है, जिसके स्थान पर अगले क्षण वजनदार रायफल आ जाती है। यदि स्वप्नकथा की शैली न होती तो इस प्रकार के चमत्कार कैसे संभव होते ?" [5]

'अंधेरे में' और 'आँसू' कविता

"'अंधेरे में' का अनुभव विद्रोह और रचना का संपृक्त अनुभव है। वहाँ 'अर्थो' की वेदना घिरती है मन में और प्रत्येक अर्थ की छाया में अन्य अर्थ/झलकता साफ–साफ। रचना और अर्थ का स्त्रोत कवि की वह व्याप्क वेदना है जिसे वह बार–बार 'सत्–चित–वेदना' कह कर अभिहित करता है। वेदना की व्याप्क दार्शनिक व्याख्या विशिष्ट छायावादी कृति 'आँसू' में जयशंकर प्रसाद ने दह है, मुक्तिबोध की व्याख्या नई कविता और सामान्य जनजीवन के सेदर्भ में है, रचना का स्त्रोत वह दोनों जगह है। यहाँ स्मरणीय है कि 'आँसू' की वेदना भी शाम के झुटपुटे से निकलकर रात के अंधेरे में सघन हो जाती है, और क्रमश; वेदना का अद्वैत रूप उभरता है। प्रसाद ने जिस स्थिति को संकेतों में प्रस्तुत किया था–

फिर उन निराश नयनों की
जिनके आँसू सूखे हैं,
उस प्रलय दशा को देखा
जो चिर वंचित भूखे हैं।

मुक्तिबोध ने उसके पूरे विस्तार को उसकी सभी चुनौतियों के साथ लिया है। वक्तृत्व के अंश शायद सबसे कम इस कविता में आते हैं, जो बहूत बार उसके नाटकीय विधान में घुलमिल गए है, और इस स्तर पर यह मुक्तिबोध की क्लासिक कृति है। 'आँसू' के अंतिम खंडों में प्रसाद की वेदना सार्वभौम हो उठती है, 'अंधेरे में' के विस्तार में परिव्याप्त मुक्तिबोध की वेदना और उससे जुड़ी रचना–शाक्ति सामान्य जनजीवन में, 'लोगो की भीड़' में व्याप्त हो जाती है। कवि की अनखोजी रही परम अभिव्यक्ति–वह शक्ति का विराट रूप है जो गुहा से निकलकर भीड़ में मिल जाता है, और जहाँ कविता का अंत होता है वहाँ कवि की तलाश फिर शुरू हो जाती है।" [6]

काव्यनायक

"'अंधेरे में' लम्बी कविता में दो नायक है। एक काव्यनायक, दूसरा स्वप्न नायक। पहला 'में' है तथा दूसरा 'अन्य' दोनों के घात–प्रतघात से कविता के आख्यान का विस्तार होता है। आठ खंड़ों में विभाजित महाकाव्यात्मक आख्यान के लिए यह कविता काव्यनायक और स्वप्न नायक की विभाजित चेतना को एक करने का प्रयास करती है तथा अन्य में 'मैं' का व्यक्तित्वांतरण कर सत्ता, व्यवस्था और सभ्यता के मूलगामी प्रश्नों का हल खोजती है।" 7

वर्ग संधर्ष का चित्रण

मूक्तिबोध ने 'अंधेरे में' भयाक्रांत शोषित वर्ग का चित्रण किया है

"मारो गोली, दागो स्साले को एकदम
दुनिया की नजरों से हटकर
छुपे तरीके से
हम जा रहे थे कि
आधी रात उसने
देख लिया हमको
व जान गया वह सब
मार डालो उसको खतम
करो एकदम।" [8]

प्रतीक

"प्रतीक में एक अनूठी शक्ति सन्निहित रहती है जिसकें कारण शब्द विशिष्ट अर्थबोध का द्योतन करने में सक्षम होते है। एक प्रकार से प्रतीक को अभिव्यक्ति का आवश्यक तत्व माना जा सकता है।"[9]

प्रतीकों का प्रयोग काव्य प्रक्रिया का एक अंग होता है,
कवि की विचारधारा को आगे बढ़ाने में प्रतीकों का प्रयोग महत्वपूर्ण होता है।

'अंधेरे में प्रतीक':

"बाहर शहर के, पहाड़ी के उस पार, तालाब–
अंधेरा सब ओर,
निस्तब्ध जल
अरे! अरे!!
तालाब के आस पास अंधेरे में वन–वृक्ष
चमक चमक उठते है हरे–हरे अचानक
वृक्षों के शीश पर नाच–नाच उठती है बिजलियाँ,
शाखाएँ, ढालियाँ झूम कर झपटकर
चीख, एक दूसरे पर पटकती हैं सिर कि अकस्मात्
वृक्षों के अंधेरे में छिपी हुई किसी एक
तिलस्मी खोह का शिला–द्वार
खुलता है धड़ से
घुसती है लाल–लाल मशाल अजीब–सी
अन्तराल विबर के तम में
लाल–लाल कुहरा,
कुहरे में, सामने, रक्तालोक–स्नात पुरूष एक,
रहस्य साक्षात।" [10]

"अंधेरे में" कविता की उपर्युक्त पंक्तियों में प्रयुक्त प्रतीकों की व्याख्या डॉ० कृष्णदेव शर्मा ने इस प्रकार की है–

'बाहर शहर के'–आम मनुष्य से भिन्न।
'पहाड़ के उस पार'- कवि का सिर पहाड़ी की भाँति ही ऊँचा होता है।
'अंधेरा तालाब' – मस्तिष्क।
'हरे–हरे वुक्ष'– नाना प्रकार के भाव–विचार।
'नाचती बिजलियाँ' – क्रांतिकारी विचार।
'डालियों के टकराहट' – विचारों का द्वन्द्व, मानसिक संघर्ष।
'तिलस्मी खोह' – कवि का अचेतन।
'लाल – लाल मशाल' – क्रांतिकारी जागरूक विचार।
'रक्तालोक स्नात पुरूष' – क्रांतिकारी विचारों से ओत–प्रोत कवि की अस्मिता।

अलंकार

अपने काव्यशिल्प को अधिक गंभीर बनाने के लिए मुक्तिबोध ने काव्यभाषा के साथ अलंकारों का भी आश्रय लिया है। अलंकारों का प्रयोग उन्होने काव्याभिव्यक्ति को सरल व प्रभावी बनाने के लिए किया है।

"घुमता है मन उन अर्थों के घावों के आसपास
आत्मा में चमकीली प्यास भर गयी है।
मानों कि कल रात किसी अनवेसित क्षण में ही सहसा
प्रेम कर लिया हो
जीवन भर के लिए !!
मानों कि उस क्षण
अतिशय मृदु किन्हीं वाँहों ने आकर
कस लिया था इस भाँति की मुझको
उस स्वप्न–स्पर्श की, चुम्बन की याद आ रही है,
याद आ रही है!!
अज्ञात प्रणयिनी कौन थी, कौन थी।" [11]

उपर्युक्त पंक्तियों में रूपक, उत्प्रेसा एंव वीप्सा अलंकारों का प्रयोंग किया गया है।

रूपक – 'अर्थों के भाव'।
उत्प्रेसा – 'मानो कल रात', मानो उस क्षणं
वीप्सा – 'कौन थी, कौन थी'।

निष्कर्ष

"गजानन माधव 'मुक्तिबोध' की अंतिम कविता 'अंधेरे में' 1952 से 1962 के बीच रची गई, जिसका अंतिम संशोधन 1962 में हुआ तथा प्रकाशन 'आशंका के द्वीप अंधेरे में, शीर्षक से 'कल्पना' में नवंबर 1964 में हुआ।" [12]

"अंधेरे में फैंटेसी में निर्मित कविता है। फैटेंसी जाग्रत स्वप्न चित्रावली है। 'अंधेरे में' आधुनिक हिन्दी में अकेजी कविता है जो चार सौ साल के औपनिवेशिक ज्ञानकांड और कलारूप को बहुआयामी चुनौती देती ळें।" [13]

"'अंधेरे में' की संरचना की सबसे बड़ी विशेषता है परस्पर विरोधी भावचित्रों का धूपछाँही मेल, जिसे आचार्य शुक्ल विरूद्धों का सामंजस्य कहते थे। अंधकार की गहरी पटभुमि पर एक आलोक–रेखा खीचकर कालजयी काव्य – कृतित्व का जो प्रतिमान किसी समय निराला की 'राम की शक्तिपूजा' ने उपस्थित किया था। 'अंधेरे में' के द्वारा मुक्तिबोध ने उसी तरह की दूसरी काव्यकृति प्रस्तुत की। 'अंधेरे में' अन्तर्गत सर्वत्र अंधेरा ही नही है, बल्कि चमकती हुई, रंग बिरंगी मणियाँ भी है, बंदूक और गोली ही नही, फूलों के गुच्छे भी है। पिशाच– आकृति पुरूष ही नही,सकर्मक सत् – चित वेदना भास्कर नए नए सहचर भी है, भय ही नही, मानव करूणा भी है, पीड़ा ही नही, आस्था भी है।" [14]

"'कामयानी के आधुनिक बोध और 'अंधेरे में' कि आधुनिक बोध की तुलना की जा सकती है। मुक्तिबोध ने 'कामायनी एक पुर्नविचार' में लिखा है– कामायनी एक आधुनिक काव्य है, जिसमें आधुनिक प्रवृतियों, तथ्यों तथा प्ररूनों को उपस्थित किया गया है। चूँकि इन आधूनिक तत्त्वों कों विशाल फैन्टेसी (तथा उसके भीतर अनेक अन्य फैन्टेसियों) में घूलामिला दिया गया, तथा वर्तमान जीवन से आकर्षक दूरी पैदा हो गई है इसलिए कामायनी हमें ऐतिहासिक महाकाव्य जैसी कुछ मालूम होती है।" पर यही उन्हें यह कहना भी जरूरी जान पड़ा कि 'कामायनी' के आधुनिक बोध की सीमा यह है कि उसमें प्रश्नों की सच्चाई का यर्चवसान झूठे उत्तरों में है और वह प्रसाद के यर्थाथबोध की ही सीमा के कारण। क्योंकि वे उस पर अपनी भाववादी आदर्शवादी पद्धति से वास्तविकताओं पर मुलम्मा चढ़ाने का यत्न करते है। कहना जरूरी नही कि 'अंधेरे में' का आधुनिक बोध तीखे यथार्थबोध से सम्पन्न है और फैन्टेसी के उपयोग के बावजूद उस पर किसी तरह का भाववाद स्तरों को खोलने में ही साथर्क है।'कामायनी' का फलक निश्चय ही 'अंणेरे की' तुलना में अधिक विशाल है। वह देवताओं की स्वप्न सृष्टि खंडित होने के बाद मानव सृष्टि समेटे हुए है। पर 'कामायनी' में प्रश्न अनुपस्थित हैं, द्वन्द्व गायब है और एक काल्पनिक समरसता का सिद्धांत कृति के अंत को सपाट सामान्य बना देता है। असके विपरीत मुक्तिबोध की कविता 'अंधेरे में' का कैनवैस उतना विशाल न होते हुए भी बाहर भीतर की वास्तविकताओं के द्वन्द्व को विस्तृत पटकथा में बदल देता है जिसकी भाषा ही 'तेजसक्रिय' नही है अन्तर्वस्तु भी प्रश्नमय है– समस्याग्रस्त है। और वे समस्याएँ किसी कल्पित भावलोक की नही हैं, इसी समाज की अनोखी विषम वर्गसंरचना और वर्गीय ग्रंथियों के सूघन विश्लेषण से पैदा हई है। ये समस्याएँ आणुनिक जीवन की जटिलताओं से उतने ही गहरे अर्थ में सम्बद्ध है जितने गहरे अर्थ में आत्मसंभवा अभिव्यक्ति की खोज के संघर्ष से जुड़ी है। जहाँ 'कामायनी' में प्रसाद के काव्यनायक की 'आत्मपरक', 'आत्मभर्त्सना' लिाकिल काव्य की पर्सनल क्वालिटि पैदा करती है वहाँ 'अंधेरे में' कविता के काव्यनायक का आत्मसंघर्ष नाटकीय तनाव और औपन्यासिक व्याप्ति के कठिन रूपों को आत्मसात करते हुए महाकाव्यात्मक ऊँचाई प्राप्त करना है।" [15]

"जिस प्रकार 'राम की शक्तिपूजा' में समास बहुला संस्कृतनिष्ठ हिन्दी के साथ ही बोलचाल की भाषा के टुकड़े पिरोए हुए है उसी तरह 'अंधेरे में' भी भाषा के दोनों रूप मिलते है।" [16]

'अंधेरे में' कहीं सघन बिबों की माला है तो कहीं ठेठ सपाटबयानी। "मुक्तिबोध की गरिमा का पता उस बिराठ बिंब–लोक से चलता है जो 'अंधेरे में' – जैसी महाकाव्यात्मक कविता अपनी समग्रता में प्रस्तुत करती है। इस संदर्भ के द्वारा ही कविता के अंतर्गत आए हुए छोटे – छोटे सपाट कथन भी अर्थ से पूर्ण जगते है। उदाहरण के लिए:

"क्या करूँ, किससे कहुँ कहाँ जाऊँ, दिल्ली या उज्जैन?
जैसी सीधी – सादी उक्ति भी कविता के नाटकीय संदर्भ में आधुनिक मानव की ऐतिहासिक वेचैनी का ध्वनित करती है।" [17]

"'अंधेरे में' मुक्तिबोध के प्रतिकनकध काव्य –संकलन 'चाँद का मुँह टेढ़ा है' की ही अंतिम कविता नही, कदाचित् उनकी अंतिम रचना भी है जिसे कवि–कर्म की चरम परिणति भी कहा जा सकता है। कुल मिलाकर इसे यदि नई कविता की भी चरम उपलब्धि कहा जाए तो अतिशयोक्ति न होगी।" [18]

संदर्भ

1. 'हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास', डॉ० रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहावाद, सहस्राब्द संस्करण, सत्राहवां संस्करण –2004,पृ० 201.
2. 'कविता के नए प्रतिमान', डॉ० नाभवर सिंह, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, इलाहाबाद, पटना, छठी आवृति 2006, पृ० –221.
3. 'मुक्तिबोध रचनावली', नेमिचंद जैन, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1980, पृ० 220.
4. वही, पृ० 221.
5. 'कविता के नए प्रतिमान', डॉ० नाभवर सिंह, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, छठी आवृति 2006,
6. पृ० –225.

7. 'हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास', डॉ० रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहावाद, सत्राहवां संस्करण –2004,पृ० 204.
8. 'अस्सी चौराहा': साहित्य और विचार–विमर्श की ई पत्रिका, मुक्तिबोध की कविता 'अंधेरे में' पर पुर्नविचार शीर्षक शोध लेख से उद्धत, लेखक–रमाज्ञा शशिधर, 4 सितंबर,2014.
9. 'मुक्तिबोध रचनावली' संपादक नेमिचंद जैन, द्वितीय संस्करण, पृ० 330.
10. 'मुक्तिबोध का शिल्प सौष्ठल', लेखिका–श्रीमती मधु श्रीवास्तव, द्वितीय संस्करण, पृ० 55.
11. 'मुक्तिबोध रचनावली' संपादक नेमिचंद जैन.
12. वही.
13. 'अस्सी चौराहा' लेखक–रमाज्ञा शशिधर, 4 सितंबर,2014.
14. वही.
15. 'कविता के नए प्रतिमान', डॉ० नाभवर सिंह, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, छठी आवृति 2006,
16. पृ० –227.
17. 'कविता के पाठ और काव्य–मर्म', परमानंद श्रीवास्तव, अभिव्यक्ति प्रकाशन, विश्वपिद्वालय मार्ग, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, सितंबर 1992, पृ० 82.
18. वही, पृ० 230.
19. वही, पृ० 230.